जनजातीय चेतना, कला, साहित्य, संस्कृति एवं समाचार का राष्ट्रीय मासिक

ककसाड़

वर्ष 11 अंक 123
जून, 2026
मूल्य : 25/- रुपए

ककसाड़
राष्ट्रीय मासिक पत्रिका

ISSN 2456-2211

दिल्ली से प्रकाशित

ककसाड़

(जनजातीय चेतना, कला, साहित्य, संस्कृति एवं समाचार का राष्ट्रीय मासिक)

जून 2026 **वर्ष-11 • अंक-123**

संस्थापना वर्ष 2015

प्रबंध एवं परामर्श संपादक
कुसुमलता सिंह

संपादक
डॉ. राजाराम त्रिपाठी

कानूनी सलाहकार
फैसल रिजवी, अपूर्वा त्रिपाठी

•

ग्राफिक डिजाईन
रोहित आनंद

• मुख्य कार्यालय एवं रचनाएँ भेजने का पता •

सी-54 रिट्रीट अपार्टमेंट, 20-आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-110092

फोनः 9968288050, 011-22728461

•

• संपादकीय कार्यालय •

151, डी.एन.के. हर्बल इस्टेट, कोण्डागाँव, छ.ग.-494226

फोनः 9425258105, 07786-242506

ई-मेल : kaksaadeditor@gmail.com
kaksaadoffice@gmail.com

वेबसाइट : www.kaksad.com

मूल्य : **रु. 25** (एक प्रति), वार्षिक : **रु. 350/-** संस्था और पुस्तकालयों के लिए वार्षिक : **रु. 500/-** वार्षिक (विदेश) : **$110** यू.एस। आजीवन व्यक्तिगत : **रु. 3000/-** संस्था : **रु. 5000/-**

संपादन-संचालन पूर्णतः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक

दिल्ली से प्रकाशित होने वाली 'ककसाड़' पत्रिका में प्रकाशित लेखकों के विचार उनके अपने हैं जिनसे संपादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

• ककसाड़ से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे • **कुसुमलता सिंह** स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक।

अनुक्रम

दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड (संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार) द्वारा पुरस्कृत

4. **संपादकीय**

साक्षात्कार

6. भीली कला में परंपरा और प्रकृति का संयोजन करते हुए प्रयोग किया है (युवा भीली कलाकार **अंजलि बारिया** से **कुसुमलता सिंह** की बातचीत)

लेख/शोध-आलेख

8. डोर से बंधी जिंदगी : काठ और पुतली : **शैलेन्द्र चौहान**

10. जनजातियों में लोक नृत्य और गीत (छत्तीसगढ़ के संदर्भ में) : **डॉ. कौस्तुभ मणि द्विवेदी**

20. पूर्व और पश्चिम का द्वंद्व : भारतीय बुद्धिजीविता की खोज में निर्मल वर्मा : **मुकुल शर्मा**

कहानी

26. बंद इंजन : **दीपक शर्मा**

28. आलू : **ज़मील खान**

कविताएँ/ग़ज़लें/दोहे

31. **पवन शर्मा,** 32. **डॉ. रेखा खराड़ी** 33. **सत्यप्रकाश ध्रुव** 34. **विज्ञान व्रत** 34. **राजेश जैन 'राही'**

यात्रा-वृत्तांत

35. एक एहसास है... बनारस : **आस्था दीपाली**

संस्मरण

43. मिथिलांचल की शादी : **डॉ. अखिलेश त्रिपाठी**

पुस्तक समीक्षा

48. हुमा का पंख : **वंदना गुप्ता**

49. हक़ : **एस.पी. सिंह**

42. **क्या है ककसाड़?**

30. **यादें**

490 **साहित्यिक समाचार**

आवरण कलाकृति - अंजलि बारिया (भील कलाकार)
मो.: 89596-79737

संपादकीय

ककसाड़ का यह जून अंक जब तलक आपके हाथों में पहुँचेगा, तब तक आषाढ़ की मध्यम दस्तक सुनाई देने लगेगी और हिंदू पंचांग का अधिक ज्येष्ठ मास भी अपने पूरे दार्शनिक आध्यात्मिक गुरु भार के साथ खरामा -खरामा चल रहा होगा। इस अधिक मास को पुरुषोत्तम मास भी कहा जाता है। पुराने लोग कहा करते थे कि अधिक मास ठहरकर आत्ममंथन करने का, चिंतन करने का दान-पुण्य करने का समय होता है, पर आज के समय में आदमी के पास अपने ही भीतर झाँकने की फुर्सत कहाँ बची है! सवाल यह कि पुरुषोत्तम मास कब आया कब खिसक गया किसे पता? और पता भी क्यों हो भला? दाल रोटी के चक्रव्यूह में उलझे तथा बाकी पूरे समय मोबाइल में गर्दन गड़ाए आदमी को इस सबसे क्या लेना देना, उसके बगल से तो पुरुषोत्तम मास की बात छोड़िए साक्षात पुरुषोत्तम महाप्रभु, चक्र सुदर्शन धारी चतुर्भुज विष्णु जी भी गुजर जाएं तो उनकी ओर भी ध्यान देने का वक्त नहीं है। ।

पंचांग में एक अतिरिक्त महीना भले जुड़ गया, किंतु जीवन में सुकून का एक दिन भी नहीं जुड़ पाया। बादलों का हाल भी आजकल बड़े नेताओं जैसा हो चला है, गरजते भरपूर हैं, आश्वासन भी भरपूर उदारता से देते हैं, पर बरसने के समय अक्सर किसी दूसरी दिशा में प्रस्थान कर जाते हैं। चिरबेचारा किसान आसमान को उसी उम्मीद से देख रहा है, जैसे आम आदमी चुनाव बाद अपने जीते हुए जनप्रतिनिधि को देखा करता है।

कभी भारतीय जनजीवन में आषाढ़ केवल वर्षा का संकेत नहीं होता था, वह लोकजीवन के भीतर नई ऊर्जा के आगमन का समय होता था। मिट्टी की पहली सोंधी-सोंधी खुशबू केवल धरती से नहीं उठती थी, वह मनुष्य की स्मृतियों से भी उठती थी और गीतों तथा उत्सव में ढल जाती थी। पर आज स्थिति यह है हर गाँव रॉकेट की गति से जल्द से जल्द शहर बन जाना चाहता है, इसके साथ ही कदमताल करती हुई गाँव की नई पीढ़ी भी शीघ्र अति शीघ्र अपने माथे पर शहरी और विकसित होने का ठप्पा लगवाने की ओर अग्रसर है। हमारे गंवई बच्चे हवा की गति तथा दिशा से, नक्षत्रों व बादलों की चाल, कीट-पतंग, जीव-जंतुओं के व्यवहार से मौसम पहचानने के परंपरागत सटीक तरीकों के बजाय अब केवल मोबाइल के मौसम ऐप पर भरोसा करना सीख रहे हैं। दुर्भाग्य यह है कि कई बार बादल और मोबाइल ऐप दोनों एक साथ धोखा दे देते हैं।

दरअसल यह केवल मौसम का संकट नहीं है। यह मनुष्य और प्रकृति के बीच टूटते संवाद का संकट भी है।

आज पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन तथा इसके प्रलयंकारी प्रभावों को लेकर चिंतित है। संयुक्त राष्ट्र की हालिया रिपोर्टों के अनुसार पिछले आठ वर्ष पृथ्वी के इतिहास के सबसे गर्म वर्षों में दर्ज किए गए हैं। भारत में भी औसत तापमान लगातार बढ़ रहा है और वर्षा का पारंपरिक चक्र तेजी से अनिश्चित होता जा रहा है। कभी अचानक बादल फटते हैं, कभी महीनों तक खेत आसमान की ओर टकटकी लगाए पड़े रहते हैं। प्रकृति मानो अब मनुष्य की भाषा में नहीं, चेतावनी में बात कर रही है।

विडंबना यह है कि इस संकट की सबसे कम चर्चा उन लोगों के ज्ञान पर होती है, जिन्होंने सदियों तक बिना किसी अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन के प्रकृति के साथ संतुलन बनाकर जीवन जिया। जनजातीय समाज ने जंगल को संसाधन नहीं, संबंध माना। उसके लिए नदी केवल पानी नहीं थी, वह जीवनदायिनी माता थी। पेड़ काटना केवल आर्थिक निर्णय नहीं, नैतिक प्रश्न भी था।

संयुक्त राष्ट्र और अनेक अंतरराष्ट्रीय अध्ययनों में यह स्वीकार किया गया है कि विश्व की लगभग 80 प्रतिशत जैव विविधता उन क्षेत्रों में सुरक्षित है जहाँ आदिवासी और स्थानीय समुदाय रहते हैं। यह तथ्य केवल आँकड़ा नहीं, आधुनिक सभ्यता के लिए आईना है। जिन लोगों को 'पिछड़ा' कहा गया, उन्हीं ने धरती को सबसे कम नुकसान पहुँचाया और जैव विविधता को जल जंगल जमीन को बचाया है। संस्कृत का एक बड़ा प्यारा श्लोक है :—

छायामन्यस्य कुर्वन्ति तिष्ठन्ति स्वयमातपे।

(अर्थात वृक्ष स्वयं धूप में खड़े रहकर दूसरों को छाया देते हैं।)

हमारी स्वनामधन्य विकसित सभ्यता ने पेड़ों से ठीक उलटा संस्कार सीखा है, खुद वातानुकूलित कमरों में बैठकर पर्यावरण नष्ट करने तथा पृथ्वी को गर्म करने की कला। अब जंगल काटने के बाद पौधारोपण की सेल्फी डालकर पर्यावरण-प्रेम सिद्ध